सम्पत्ति ने मनुष्य को क्रीतदास बना लिया है। उसकी सारी मानसिक, आत्मिक और दैहिक शक्ति केवल सम्पत्ति के संचय में बीत जाती है। मरते दम तक भी हमें यही हसरत रहती है कि हाय, इस सम्पत्ति का क्या हाल होगा। हम सम्पत्ति के लिए जीते हैं, उसी के लिए मरते हैं। हम विद्वान बनते हैं सम्पत्ति के लिए, गेरुए वस्त्र धारण करते हैं सम्पत्ति के लिए। घी में आलू मिलाकर हम क्यों बेचते हैं? दूध में पानी क्यों मिलाते हैं? भाँति-भाँति के वैज्ञानिक हिंसा-यंत्र क्यों बनाते हैं? वेश्याएँ क्यों बनती हैं, और डाके क्यों पड़ते हैं? इसका एकमात्र कारण सम्पत्ति है। जब तक सम्पत्तिहीन समाज का संगठन नहीं होगा, जब तक सम्पत्ति व्यक्तिवाद का अन्त न होगा, संसार को शान्ति न मिलेगी।

– प्रेमचन्द ('राष्ट्रीयता और अंतरराष्ट्रीयता' लेख से)

"अब क्रान्ति में ही देश का उद्धार है, ऐसी क्रान्ति जो सर्वव्यापक हो, जो जीवन के मिथ्या आदर्शों का, झूठे सिद्धान्तों और परिपाटियों का अन्त कर दे। जो एक नये युग की प्रवर्तक हो, एक नयी सृष्टि खड़ी कर दे, जो मनुष्य को धन और धर्म के आधार पर टिकने वाले राज्य के पंजे से मुक्त कर दे।" – प्रेमवन्द ('कर्मभूमि' से)

"हमने किसी ऐसी उम्दा चीज़ का लुत्फ़ न कभी उठाया है और न ही कभी उठा पायेंगे, जिसमें कोई श्रम न लगा हो। चूँकि सभी उम्दा चीज़ें श्रम द्वारा पैदा की जाती हैं, इसलिए इसका सीधा निष्कर्ष यह है कि जिन्होंने श्रम करके चीज़ों को पैदा किया है, वे ही हर अधिकार के हक़दार होते हैं। मगर युगों से दुनिया में यही चला आ रहा है कि श्रम कोई करता है और फल के बड़े हिस्से का लाभ दूसरे उठाते हैं। यह ग़लत है और इसे नहीं चलने देना चाहिये।...."

– अब्राहम लिंकन